न्यायालय की प्रतिक्रिया ऐसी क्यों ?

हाल ही में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से जुड़ा ऐसा मामला सामने आया है, जिसमें न्यायालय की भूमिका भी संदेहपूर्ण हो जाती है। दिल्ली के एक न्यायालय ने 'धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाने' का आरोप लगाने वाली याचिका की सुनवाई के साथ ही एक प्रदर्शनी से एम.एफ.हुसैन की दो पेंटिंग को जब्त करने की अनुमति दे दी थी।

कुछ बिंदु -

- न्यायालय लोगों के संवैधानिक अधिकारों की संरक्षक है। कला के विषय को अनुच्छेद 19 और 21 के अनुसार दलील के लिए तैयार किया ना चाहिए।

- पिछले अक्टूबर में, बॉम्बे उच्च न्यायालय ने चित्रकार शूजा के कुछ जब्त किए गए चित्रों को यह कहकर छोड़ने का आदेश दिया था कि 'हर नग्न पेंटिंग को अश्लील' नहीं कहा जा सकता है। इसके बावजूद दिल्ली उच्च न्यायालय ने हुसैन के चित्रों को जब्त करने की अनुमति दी है। हुसैन को पद्म श्री, पद्म भूषण और पद्म विभूषण से भारत सरकार ने सम्मानित किया है। उनका 'अपराध' कानूनी रूप से कार्यवाही योग्य नहीं है।

- इसके अलावा, उच्च न्यायालयों के सामने अधीनस्थ न्यायालयों को प्रशिक्षित करने की चुनौती होती है। हुसैन के शिकायतकर्ता की तरह अधीनस्थ न्यायालय भी नैतिकतावादी हो सकते हैं। उच्च न्यायालयों को दायित्व है कि कला, सिनेमा और संगीत जैसे अभिव्यक्ति के बारीक मामलों पर भारतीय न्याय संहिता की धाराओं को सही तरीके से लागू करने या न करने के उदाहरण अधीनस्थ न्यायालयों के सामने रखें।

न्यायालय कोई निजी दरबार नहीं है। इसके दायरे में होने वाली कार्यवाही संवैधानिक होनी चाहिए।

'द टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित संपादकीय पर आधारित। 25 जनवरी, 2025